MODERN
APPROACH TO
INTRODUCTION TO
INDIAN ART
SEC-4 : HIST (A) 319
B.A.. PART-III (H.P.U)

"India, with a rich cultural heritage is well known for her deep-rooted tradition in arts and crafts. The rich and significant forms India achieved show how closely integrated with the life and how expressive of a way of living crafts can be." —**Dr. P.N. Chopra**

1 कला के मूल्यांकन में प्रमुख शब्दों को समझना (UNDERSTANDING KEY TERMS IN ART APPRECIATION)

मनुष्य की अनुभूतियों को अभिव्यक्ति का नाम कला है। भारतीय कला विश्व के सांस्कृतिक इतिहास की धरोहर है। कला के माध्यम से हमें किसी देश के सांस्कृतिक गौरव तथा उसके विकास व उत्थान के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। कला हमारी संस्कृति की धरोहर को संरक्षण प्रदान करती है। कला के माध्यम से ही हम प्राचीन समय से चली आ रही संस्कृति से अवगत हो पाते हैं। भारतीय दृष्टि में सामान्य रूप से कला कार्यविषयक कौशल है। एक कलाकार द्वारा कला के माध्यम से समाज को प्रतिबिंबित किया जाता है। कला मानव मन की भावनाओं, संवेदनाओं या विचारों को प्रस्तुत करने का एक ढंग है। कलाकार द्वारा अपनी कलाकृति के माध्यम से अपनी भावनाओं व सामाजिक स्थिति को भली-भाँति दर्शाया जाता है।

वास्तुकला, चित्रकला, मूर्तिकला, संगीतकला, शिल्पकला, नृत्यकला आदि कला के ही अंग हैं। कला अपनी मूक भाषा के होते हुए भी अपने रूपों व प्रतीकों द्वारा हमारे समाज की संस्कृति व मूल्यों को दर्शाती है। कला के अन्य रूपों का संक्षिप्त ब्यौरा निम्नलिखित है।

प्राचीन भारत से लेकर आधुनिक भारत में शिल्पकला का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। शिल्पकला वह कला है जिसमें हस्त निर्मित वस्तुओं का निर्माण किया जाता है।

हमारे दैनिक जीवन में प्रयोग में आने वाली प्रत्येक वस्तुओं का संबंध शिल्पकला से देखा जा सकता है। हस्त शिल्पकला एक अनूठे प्रकार का कौशल है जो मशीनों के प्रयोग से कम व हाथों के प्रयोग से अधिक किया जाता है। शिल्पकला के माध्यम से बनी वस्तुएँ बहुत ही आकर्षित होती हैं। इसके कई प्रकार पाए जाते हैं जैसे—काष्ठ शिल्पकला, चमड़ा शिल्पकला, कपड़ा शिल्पकला, काँच शिल्पकला, मृदभांड शिल्पकला आदि।

मूर्तिकला भी प्राचीनतम कला विधाओं में से एक है। भारतीय मूर्तिकला अपनी सुंदरता व कला-कौशल के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। भारतीय मूर्तिकला को देश की विशिष्ट राष्ट्रीय कला माना जा सकता है। मूर्तिकला में विभिन्न प्रकार की मिट्टी, पत्थर, धातु आदि की सहायता से मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। मूर्तिकला के माध्यम से हमें अपनी प्राचीन कलाओं के बारे में ठोस व स्थायी प्रमाण प्राप्त होते हैं। मूर्तिकला के आगे कई अंग पाए जाते हैं जैसे—नक्काशीदार मूर्तिकला, गोल मूर्तिकला, काष्ठ मूर्तिकला, मॉडलिंग मूर्तिकला व स्थापना मूर्तिकला।

राहत मूर्तिकला, मूर्तिकला का ही एक भाग है। इस मूर्तिकला में पृष्ठभूमि से थोड़ा सा उभार ला कर मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। राहत मूर्तिकला विधि से तैयार की गई मूर्तियाँ बड़ी आकर्षित दिखाई देती हैं। ये मूर्तियाँ अपने सपाट धरातल व फलोटिंग छवि के कारण दर्शकों का मन मोह लेती हैं।

चित्रकला भारत की प्राचीन कलाओं में से एक है। यह कला हड़प्पा काल से पाई जाती है। हड़प्पा काल की खुदाई से मिली गुफाओं में दीवारों पर बड़ी सुंदर चित्रकारी पाई गई है। यजुर्वेद के 30वें अध्याय में वर्णित 64 कलाओं में से चित्रकला का वर्णन देखा जा सकता है। चित्रकला के माध्यम से चित्रकार द्वारा रंग-बिरंगे रंगों का कौशलपूर्ण प्रयोग करके चित्रों को सजीव रूप प्रदान किया जाता है। भारतीय चित्रकला अपनी उत्कृष्ट कौशल के कारण विश्वभर में प्रसिद्ध है।

लघु चित्रकला, चित्रकला का एक अभिन्न अंग है। इस चित्रकला में चित्रों को सूक्ष्म रूप दिया जाता है। लघु चित्रकला के अंतर्गत चित्र को मध्य में बनाकर उसके इर्द-गिर्द हाशिए छोड़े जाते हैं। इन हाशियों पर चित्र से संबंधित वर्णन किया जाता है। इस चित्रकला का आरंभ 6वीं-7वीं शताब्दी में हुआ माना जाता है। इसे 18वीं-20वीं शताब्दी के मध्य पहाड़ी राजाओं द्वारा संरक्षण प्रदान किया गया।

भित्ति चित्रकला ये वे चित्र होते थे जिन्हें भवनों या गुफाओं की दीवारों पर चित्रित किया जाता है। अजंता-ऐलोरा की गुफाओं, बाघ गुफाओं आदि की दीवारों पर बने चित्र।

फ्रेस्को चित्रकारी चित्रकला पद्धति का ही एक भाग है। इस चित्रकला शृंखला में दीवारों व छतों पर प्लस्तर की सतह को चूने से भिगोकर उस पर ताज़ी-ताज़ी गीली सतह पर ही पेंटिंग की जाती है। इसमें पेंटिंग बनाने के लिए चिकनी मिट्टी, गोबर व धान की भूसी, बजरी व रेत आदि को मिलाकर आधा इंच मोटी तह के घोल द्वारा पेंटिंगस को तैयार किया जाता है। इसे बनाने का कार्य एक ही दिन में पूर्ण करना पड़ता है अन्यथा इसके सूख जाने पर इसे बनाना असंभव हो जाता है।

रंगोली भारतीय संस्कृति की वह मनोहर कला है जिसके बिना कोई भी त्योहार मेला व अन्य कोई भी खुशी अधूरी है। इसे घर की चौखट व आँगन में रंग-बिरंगे रंगों अथवा फूलों से बनाया जाता है। रंगोली हमारी धार्मिक व सांस्कृतिक आस्था का प्रतीक रही है। रंगोली बनाने का प्रचलन भारत के सभी राज्यों में देखा जा सकता है। अलग-अलग राज्यों में रंगोली को भिन्न-भिन्न नामों जैसे अल्पना, चौंक पूरना, संस्कारा भारती, मांडना आदि नामों से जाना जाता है। रंगोली बनाने का मुख्य उद्देश्य देवी-देवताओं को प्रसन्न करना, घर में खुशहाली व स्मृद्धि लाना समझा जाता है। लोगों का यह मानना है की रंगोली को बनाने से घर में देवी-देवताओं का वास होता है तथा घर में सुख-स्मृद्धि आती है।

लोक कला हमारी परंपरागत संस्कृति को दर्शाने का एक माध्यम है। लोग कला के द्वारा लोग अपनी जाति-संप्रदाओं को भूलकर अपने राज्य की संस्कृति को दर्शाते हैं। इसके माध्यम से हमें भिन्न-भिन्न स्थानों की संस्कृति के बारे में जानने का अवसर प्राप्त होता है। प्रत्येक संस्कृति व राज्य से जुड़े लोग अपनी संस्कृति को लोगों के सम्मुख प्रदर्शित करने के लिए बढ़-चढ़ कर आगे आते हैं।

कला (Art)

भारतीय कला भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। यह भारतीय संस्कृति की वाहिका भी है। भारतीय कला का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। भारतीय कला की उत्पत्ति हड़प्पा काल के समय से मानी जाती है। हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त इमारतों व भवनों की दीवारों पर पाई जाने वाली चित्रकला कला का उत्कृष्ट प्रमाण है। कला मनुष्य के मन की भावनाओं, विचारों तथा संवेदनाओं को पेश करने का एक सरल तरीका है। कला के माध्यम से कोई भी व्यक्ति अपने मन के भावों को दूसरों के सामने व्यवस्थित रूप तथा प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर सकता है।

कला से अभिप्राय (Meaning of Art)

कला वह कौशल है जिससे मनुष्य को प्रसन्नता, सहानुभूति, दुख: व प्रेरणा प्राप्त होती है। कला संस्कृत भाषा के शब्द 'कल्' धातु से लिया गया शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ है—प्रेरित करना। कलाकार का मुख्य उद्देश्य अपनी कला रचना द्वारा दूसरों को प्रेरणा देना होता है। कला को अंग्रेज़ी भाषा में 'Art' कहा जाता है। 'आर्ट' शब्द 'अर' शब्द का ही रूपांतरण है। 'अर' शब्द का अर्थ होता है—बनाना, पैदा करना या रचना करना। जब इसे व्यक्तिगत रूप दिया जाता है तो इसे आर्ट का नाम दे दिया जाता है। विभिन्न विचारकों द्वारा कला की परिभाषा इस प्रकार दी गई है।

प्रसिद्ध लेखक रविंद्रनाथ टैगोर के शब्दों में, "कला में मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति करता है।"

प्रसिद्ध लेखक जयशंकर प्रसाद के शब्दों में, "ईश्वर की कृतित्व शक्ति का मानव द्वारा शारीरिक तथा मानसिक कौशल पूर्ण निर्माण कला है।"

प्रसिद्ध विचारक क्रोचे के शब्दों में, "प्रत्येक महान् कला ईश्वरी कृतित्व के प्रति मानव अहलाद की अभिव्यक्ति कला है।"

प्रसिद्ध विचारक हिगेल के शब्दों में, "आदि भौतिक सत्ता को व्यक्त करने का माध्यम कला है।"

प्रसिद्ध विचारक हरबर्ट रीड के शब्दों में, "अभिव्यक्ति के अहलाद/रंजक स्वरूप को कला कहते हैं।"

एक अन्य प्रसिद्ध लेखक मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार, "कला शिवत्व की प्राप्ति (उपलब्धि) के लिए सत्य की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति है।"

प्लेटो के शब्दों में, "कला सत्य की अनुकृति है।"

अरस्तू के शब्दों में, "कला प्रकृति का अनुकरण है।"

प्रसिद्ध विचारक रस्किन के अनुसार, "कला में मनुष्य अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है।"

कला की विशेषताएँ
(Features of Art)

कला से हमें सौंदर्य की अनुभूति, आनंद की प्राप्ति तथा मानव चेतना का विकास होता है। एक कलाकार को अपनी रचना का एक सफल रूप प्रदान करने के लिए कला के कुछ आवश्यक तत्त्वों को साथ लेकर चलना पड़ता है, जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

1. **रेखा (Line)**—रचनाकार के लिए अपनी किसी भी रचना को साकार रूप प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम रेखा का चुनाव करना पड़ता है। कलाकार पर निर्भर करता है कि उसे किस प्रकार की रेखाओं की आवश्यकता है। रेखाएँ लंबी-चौड़ी तथा गतिशील व स्थिर हो सकती हैं। रेखाएँ भी पाँच प्रकार की पाई जाती हैं—

   (*i*) **वास्तविक रेखाएँ**, ये वे रेखाएँ होती हैं जो चित्र में पहले से ही मौजूद होती हैं। जैसे किसी वेशभूषा अथवा किसी आभूषण में सम्मिलित रेखाएँ।

   (*ii*) **अंतर्निहित रेखाएँ**, ये वे रेखाएँ होती हैं जिन्हें दो या दो से अधिक क्षेत्रों को एक साथ जोड़कर बनाया जाता है। विभिन्न रंगों अथवा दो क्षेत्रों को एक साथ लाने के लिए अंतर्निहित रेखाओं की आवश्यकता पड़ती है।

   (*iii*) **सीधी व शास्त्रीय रेखाएँ**, ये वे रेखाएँ होती हैं जो स्वाभाविक दृष्टि से स्थिर होती हैं जो कि रचना को दिशा प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

   (*iv*) **अभिव्यंजक रेखाएँ**, इस प्रकार की रेखाएँ गतिशील रेखाएँ होती हैं। इन रेखाओं का प्रयोग गतिशील चित्र दर्शाने के लिए किया जाता है। आकृतियों में लहराते कपड़ों अथवा लहराते अंगों को दर्शाने के लिए अभिव्यंजक रेखाओं का प्रयोग किया जाता है।

   (*v*) **हैच रेखाएँ**, इन रेखाओं का प्रयोग किसी भी चित्र में किसी वस्तु के छायांकन को प्रस्तुत करने तथा दृश्य को बनावट देने के लिए किया जाता है।

2. **आकार (Shape)**—किसी रचना को संपूर्ण रूप देने के लिए किसी रचनाकार के लिए रेखा के पश्चात् जो निर्धारित करना अनिवार्य होता है वो है आकार निश्चित करना। कलाकार को यह निर्णय लेना होता है कि उसे अपनी रचनाओं को क्या आकार देना है। वह अपनी रचनाओं को भिन्न-भिन्न प्रकार की बनावटें देकर प्रदर्शित करता है। आकार दो प्रकार के होते हैं—ज्यामितीय आकार तथा कार्बनिक आकार। वर्ग, त्रिकोण, वृत्त तथा षट्भुज आदि ज्यामितीय आकार का रूप है। कार्बनिक रूप में मनुष्यों व पशुओं के आकार पाए जाते हैं।

3. रंग (Colour)—रेखाएँ व आकार निश्चित होने के उपरांत रंगों का उचित चुनाव करना आवश्यक होता है। यह किसी भी रचना को वास्तविक रूप प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि रंगों का चुनाव सही नहीं किया जाता है तो चित्र अपने सही आकार व अपने वास्तविक रूप से पथभ्रष्ट हो जाते हैं। रचनाकार के लिए रंगों का चुनाव करना बेहद अनिवार्य तथा महत्त्वपूर्ण है। रचनाकार द्वारा रचना का निर्माण करने का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि वह दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित कर सके तथा चित्र के रूप में अपने मन के भावों को समझा सके। ऐसा तभी संभव हो सकता है यदि वह अपनी रचना को उचित रूप में प्रदर्शित कर सके, जिसके लिए उचित ढंग से रंगों का भरा जाना अनिवार्य है। रंगों का प्रयोग मूड और भावनाओं को दिखाने के लिए किया जाता है। यदि चटक रंग जैसे लाल, नीला, पीला, गुलाबी रंगों का प्रयोग किया गया है तो प्रसन्नता को दर्शाया जा रहा है तथा यदि काला, सफेद रंग दर्शाया जा रहा है अर्थात् दुःख व उदासी को दर्शाया जा रहा है।

4. बनावट (Texture)—कला को सजीव रूप देने में रचना की बनावट महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कलाकार द्वारा बनाई गई आकृति की बनावट ऐसी होनी चाहिए जो हमें उसे स्पर्श करने के लिए मजबूर कर दे। उसे देखने भर से ही उसकी सजीवता का आभास होना चाहिए। कला में बनावट हमारे स्पर्श की भावना को आकर्षित करती है। कला को रूप देते समय उसकी मोटाई, लंबाई, चौड़ाई, उसके खुरदरेपन अथवा चिकनेपन आदि की ओर ध्यान देना पड़ता है। कला को अंतिम रूप देते समय उसमें कई प्रकार के अलंकरणों को जोड़ा जाता है जो रचना की शोभा बढ़ाने में तथा उसे और आकर्षित बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं। उदाहरणत: यदि किसी स्त्री की मूर्ति की रचना की गई है तो उसके बालों में फूल, आँखों में काजल, हाथों में चूड़ियाँ, पाँव में पायजेब, उसकी वेशभूषा को निखारते हुए आभूषण आदि वस्तुएँ मानो जान डाल देते हों।

5. स्थान (Place)—रचनाकार द्वारा अपनी रचना को सफल रूप देने के लिए अपनी रचना के आस-पास का स्थान निश्चित करना पड़ता है कि उसे अपनी रचना को किस स्थान पर प्रदर्शित करना है। उसे अपनी रचना के आस-पास पहाड़, गहराई, समुद्र, गाँव अथवा झीलों को दर्शाना है। वह अपनी कला के अनुसार उसके स्थान का चयन करता है कि उसकी कलाकृति की पृष्ठभूमि कैसी हो, जो उसकी रचना को सजीव व वास्तविक रूप प्रदान करने में समर्थ हो।

कला के प्रकार
(Types of Art)

भारतीय कला भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। कला हमारी प्राचीन संस्कृति को पेश करने का एक स्रोत है। कला के निम्नलिखित प्रकार पाए जाते हैं—

1. वास्तुकला (Architecture)—इसके अंतर्गत किसी इमारत, भवन, किले, धार्मिक स्थल, पुल व बाँध आदि के निर्माण में कला को सम्मिलित किया जाता है। कला का यह रूप सिंधु घाटी सभ्यता के समय से ही देखा जा सकता है। उस समय बनाए जाने वाले बड़े-बड़े स्नानाघर, योजनाबद्ध सड़कों व नालियों का निर्माण, प्रत्येक घर में आँगन व कुएँ का निर्माण उत्कृष्ट वास्तुकला के प्रमाण हैं। भारतीय वास्तुकला में इस्लाम के आगमन से बहुत ही प्रभावशाली परिवर्तन आए। मुस्लिम कलाकारों ने वास्तुकला के जो उत्कृष्ट नमूने पेश किए हैं वे अमूल्य हैं। वास्तुकला की ऐसी उदाहरणें आधुनिक समय में मिलना लगभग असंभव हैं। मुस्लिम कारीगरों द्वारा बनाई गई इमारतों व उनमें की गई नक्काशी व दीवारों, गुंबदों व छतों पर की गई कारीगरी को देखकर आज भी दर्शक मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। मुगल साम्राज्य के दौरान वास्तुकला के क्षेत्र में अद्वितीय विकास हुआ । इस काल में निर्मित मकबरे, किले व इमारतें वास्तुकला की उत्कृष्ट उदाहरणें हैं।

2. चित्रकला (Paintings)—किसी मनुष्य, पेड़-पौधों, पशु व प्राकृतिक दृश्यों की आकृति को दर्शाना चित्रकला कहलाती है। चित्रकला का इतिहास बहुत ही प्राचीन है। चित्रकला की उदाहरणें पाषाण काल से ही देखी

जा सकती हैं। भीमबेटका गुफा, एलोरा गुफा व अजंता की गुफा... समय की चित्रकला की उदाहरणों से हमें पाषाण कालीन मानव के जीवन की झलक देखने को मिलती है। इस काल की चित्रकारी को प्रागैतिहासिक चित्रकला कहा जाता था। यह चित्रकारी शैल चित्रों के रूप में पाई गई थी। समय के साथ-साथ चित्रकला के क्षेत्र में अद्वितीय विकास हुआ। मंदिरों की दीवारों पर उच्च श्रेणी की चित्रकारी की जाने लगी। चित्रकला के निम्नलिखित प्रकार पाए जाते हैं—

(i) **लघु चित्रकला (Miniature Paintings)**—लघु चित्रकला का अर्थ उसके नाम से ही स्पष्ट हो जाता है लघु चित्रकला अर्थात् लघु (छोटे चित्र)। ये वे चित्र होते हैं जो आकार में बहुत छोटे होते हैं अथवा इनके आस-पास हाशिए छोड़ कर अथवा उन पर चित्र की जानकारी के अनुसार लिखा जाता था तथा मध्य में चित्र चित्रित किया जाता था।

(ii) **भित्ति चित्र (Mural Paintings)**—ये वे चित्र होते थे जिन्हें दीवारों पर चित्रित किया जाता था। इसकी उदाहरण आदि काल में खुदाई से प्राप्त गुफाओं से की जा सकती है। उस समय गुफाओं की दीवारों पर भित्ति चित्र चित्रित किए जाते थे।

(iii) **फ्रेस्को (Fresco)**—ये चित्रकला का ही एक रूप है। फ्रेस्को शब्द अंग्रेज़ी भाषा के शब्द **'Fresh'** से बना है। इस चित्रकारी पद्धति में गीले-गीले पलास्टर पर चित्रकारी की जाती है।

3. मूर्तिकला (Sculpture)—मूर्तिकला भी प्राचीनतम कला विधाओं में से एक है। इसके अंतर्गत मिट्टी, पत्थर, धातु जैसे कई अन्य पदार्थों के प्रयोग से विभिन्न प्रकार की आकृतियों की रचना की जाती है। मूर्तिकला को कला के सभी रूपों में से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मूर्तिकला का इतिहास बहुत ही प्राचीन है। हमें हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से मिट्टी से बनी देवी-देवताओं की कई मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। खुदाई से प्राप्त नर्तकी की कांस्य धातु से बनी मूर्ति बहुत प्रसिद्ध है। समय के परिवर्तन के साथ-साथ मूर्तिकला के क्षेत्र में अद्वितीय परिवर्तन आए हैं। शताब्दियों में परिवर्तन के साथ मूर्तिकला का विकास अपने इस शिखर तक पहुँच गया है जो कि अतुलनीय है। मूर्तिकारों द्वारा मूर्तियों की रचना इस प्रकार की जाती है जिसे कोई भी व्यक्ति देखकर मंत्रमुग्ध ही हो जाए। आधुनिक समय तैयार की गई मूर्तियों की रचना इस प्रकार की है मानो वे सजीव हों।

4. संगीत कला (Music)—संगीत कला वह कला होती है जिसमें किसी व्यक्ति के द्वारा गायन रूप में तथा किसी वाद्य यंत्र के वादन के रूप में उत्पन्न किया जाता है। जिससे श्रोताओं को आत्मिक शांति का अनुभव होता है। संगीत कला को एक प्रदर्शन कला, एक ललित कला अथवा एक श्रवण कला के रूप में देखा जा सकता है। प्राचीन समय से ही धार्मिक अनुष्ठानों में संगीत को अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हमारे प्राचीन वेद सामवेद में संगीत के महत्त्व के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गई है। सामदेव में यज्ञों व धार्मिक अनुष्ठानों के समय गाए जाने वाले अनेकों मंत्रों का वर्णन किया गया है। संगीत कला धार्मिक अनुष्ठानों, सामाजिक गतिविधियों तथा मनोरंजन की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। समय के परिवर्तन के साथ-साथ आजकल संगीत कला में भी बहुत-से परिवर्तन देखे जा सकते हैं। आजकल आर्केस्ट्रा, जैज़ बैंड तथा रॉक बैंड संगीतकार भी देखे जा सकते हैं। आधुनिक समय में शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ संगीत की अनेकों विधाएँ देखी जा सकती हैं।

5. मृदभांड कला (Pottery Craft)—मृद्भांड कला (मिट्टी के बर्तन) बनाने की कला भी कला का एक अभिन्न अंग है। हड़प्पा की खुदाई से हमें कई प्रकार के मृद्भांड प्राप्त हुए हैं। उस समय घरेलू प्रयोग के लिए मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग करते थे। वे मिट्टी को अच्छी प्रकार बर्तनों का आकार देकर पका कर प्रयोग करने योग्य बनाते थे। आधुनिक समय में भी मिट्टी से कई बर्तनों का प्रयोग किया जाता था। मिट्टी से बने बर्तनों को वैज्ञानिक रूप से भी गुणकारी समझा जाता है। इसमें रोगों से लड़ने की प्राकृतिक शक्ति होती है। लोग प्राय: घरों में मिट्टी से बने घड़ों का प्रयोग करते हैं जिसमें पानी प्राकृतिक रूप से ही ठंडा व मीठा रहता है जो कि हमारे स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक होता है।

6. वस्त्र कला (Textile Art)—वस्त्र कला भी कला का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। मानव सभ्यता के आरंभ से ही कपड़ा मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकता रही है। समय परिवर्तन के साथ-साथ लोगों के रहन-सहन में बदलाव के कारण उनके वस्त्र पहनने के ढंगों में भी परिवर्तन आए हैं। भारत की वस्त्र कला संपूर्ण विश्व भर में विख्यात है। भारत के बनारस की बनारसी साड़ियाँ व कांजीवरम् साड़ियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। लखनऊ व कश्मीर में तैयार की जाने वाली कढ़ाई वाली चादरें, शालें व सूट अपनी सुंदरता के लिए विदेशों तक प्रसिद्ध हैं।

7. शिल्प कला (Craft)—शिल्प कला, कला का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। शिल्प कला में किसी भी व्यक्ति में शिल्प निर्माण का कौशल होना अनिवार्य है। शिल्प कला गाँवों व शहरों में रहने वाले लोगों को आत्मनिर्भर बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिल्प कला में उन सभी वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है जिनकी कारीगरी मानव हाथों द्वारा की जाती है। शिल्प कला कौशल कलात्मक कुशलता को दर्शाता है। कलाकार विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के निर्माण में अपने कौशल का उपयोग करते हैं जो कि सजावटी व कार्यात्मक हो सकता है।

शिल्प कला (Craft)

शिल्प कला का भारतीय संस्कृति में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। शिल्प आंदोलन का आरंभ 19वीं शताब्दी के अंत में ब्रिटेन में हुआ था। इस आंदोलन में सर्वप्रथम जुड़ने वाले प्राथमिक कलाकार विलियम मॉरिस हैं। उन्होंने आर्थिक सुधार में योगदान देने के लिए कला के महत्त्व पर बल देते हुए शिल्प कौशल की गुणवत्ता पर बल दिया। प्राचीन भारत में गाँव अथवा नगर शिल्प कला के महत्त्वपूर्ण केंद्र थे। उस समय गाँवों व नगरों में रहने वाले लोगों को आत्मनिर्भर बनाने तथा आजीविका कमाने में शिल्प कला ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। शिल्प कला ऐसे कलात्मक कार्य को कहा जाता है जिसकी कारीगरी मानव हाथों द्वारा की जाती है। कलाकारों द्वारा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की रचना के लिए अपने कौशल का उपयोग किया जाता है। यह एक अनूठे प्रकार की कला है क्योंकि इसमें किसी भी मशीन के उपयोग के बिना वस्तुएँ पूर्ण रूप से हस्त निर्मित होती हैं। जनजातीय एवं ग्रामीण समुदायों में शिल्प कला को विशेष महत्त्व प्राप्त है वे आजीविका कमाने के साथ-साथ अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित की जाने वाली कला के रूप में भी प्रयोग करते हैं।

शिल्प कला के प्रकार (Types of Craft)

1. काष्ठ शिल्प (Wooden Craft)—काष्ठ हस्तशिल्प की परंपरा बहुत ही समृद्ध व विविध है। भारत में विशाल वन क्षेत्र पाए जाते हैं तथा लकड़ी इन संसाधनों से प्राप्त प्रमुख उत्पाद है। काष्ठ कला के अंतर्गत लकड़ी से कलाकृतियाँ एवं घरेलू उपयोग के सामान बनाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त लकड़ी की बनाई जाने वाली सबसे प्रमुख वस्तुओं में लकड़ी से बना फर्नीचर है। हमें शीशम की लकड़ी, सागवान की, पाइनवुड आदि से विभिन्न प्रकार की उत्कृष्ट लकड़ी के फर्नीचर मिलते हैं। भारत के उत्तरी राज्य लकड़ी के काम के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं।

(*i*) **पंजाब** के कई क्षेत्र जैसे करतारपुर, लुधियाना व जालंधर आदि अपने उत्तम फर्नीचर के लिए प्रसिद्ध हैं।

(*ii*) लकड़ी के फर्नीचर बनाने में सबसे बड़े केंद्रों में से **कश्मीर** है। कश्मीर में फर्नीचर बनाने के लिए मुख्यत: अखरोट तथा देवदार की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। कश्मीर में बने लकड़ी के घर अथवा हाऊस बोट बहुत प्रसिद्ध हैं।

(*iii*) **छत्तीसगढ़** का क्षेत्र लकड़ी के मुखौटे, दरवाजे एवं खिड़की के फ्रेम तथा मूर्तियों के निर्माण के लिए जाने जाते हैं।

(*iv*) फर्नीचर उद्योग में गुजरात भी एक प्रमुख केंद्र है। यहाँ खिड़कियों व दरवाज़ों को बनाने के लिए जाली के काम का उपयोग किया जाता है।

(v) झारखंड अपने लकड़ी ... जाती है तथा ये प्राय: जोड़े में ही मिलते हैं। ये बहुत ही आकर्षक होते हैं।

(vi) **गोवा** की लकड़ी की नक्काशी भारतीय संस्कृतियों व पुर्तगाली संस्कृति के सौंदर्य का समिश्रण है। गोवा में मिलने वाले लकड़ी के उत्पादों में प्रमुखत: पुष्प पशु-पक्षी तथा मानव मूर्तियाँ सम्मिलित हैं।

(vii) **कर्नाटक** अपने चंदन की लकड़ी से निर्मित सजावटी सामान, फूलों, लताओं तथा पक्षियों व जानवरों की मूर्तियों के लिए सुप्रसिद्ध है।

(viii) **राजस्थान** में लकड़ी का सामान बनाने के लिए रोहिदा की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। ये सिंदूर के बक्से तथा लकड़ी के कटोरे, घरेलू उपयोग की वस्तुएँ शृंगार का सामान आदि बनाने के लिए इसका प्रयोग करते हैं।

2. चमड़ा शिल्पकला (Leather Craft)—भारत में चमड़े के कौशल की परंपरा सदियों से चली आ रही है। यह उद्योग हजारों वर्ष पुराना है। वर्तमान समय में चमड़ा उद्योग भारत से निर्यात होने वाली वस्तुओं में से प्रमुख है। चमड़े का प्रयोग केवल जूते बनाने के लिए नहीं बल्कि चमड़े की टोपी, बैग, काठी, ढाल आदि बनाने में भी किया जाता है। भारत अपने चमड़े उत्पादों के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है।

(i) **महाराष्ट्र** अपनी चमड़े से बनी कोल्हापुरी चप्पलों के लिए पूर्ण भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। यहाँ के चमड़ा उद्योग से संबंधित कारीगर चमड़े को अच्छे से पीट-पीट कर तदोपरांत उसमें वानस्पतिक रंजकों का प्रयोग करके इन्हें भिन्न-भिन्न रंग दिए जाते हैं।

(ii) **राजस्थान** के क्षेत्र अपने यहाँ बनने वाली हस्तनिर्मित पारंपरिक जूती जिसे की मोजड़ी कहा जाता है। यह राजस्थान, जयपुर व जोधपुर आदि क्षेत्रों में प्राय: पाई जाती है। इसे चमड़े से तथा हाथों से बनाया जाता है।

(iii) राजस्थान के **बीकानेर** राज्य में ऊँठ के चमड़े से बनाई गई वस्तुओं का प्रचलन है। इन वस्तुओं को दीवारों व भीतरी छतों, काँच पर अथवा लकड़ी आदि पर भी दर्शाया जाता है।

(iv) **इंदौर** राज्य अपने राज्य में बनने वाले चमड़े के खिलौनों के लिए देश भर में प्रसिद्ध है।

3. कपड़े पर शिल्प कला (Textile Craft)—भारत के प्रसिद्ध शिल्पों में कपड़े पर शिल्प कला सर्वाधिक प्रसिद्ध है। मुगल काल से लेकर स्वदेशी आंदोलन, ब्रिटिश राज तथा स्वतंत्रता के पश्चात् भी संपूर्ण देश के कारीगर, बुनकर, वस्त्र कला में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देते आ रहे हैं। विदेशों में भारत के कई कोनों में से वस्त्रों का निर्यात किया जाता है। वस्त्र निर्माण के पश्चात् उसके रूपांकन की तकनीकें भी अत्यधिक विकसित अवस्था में थीं।

(i) **कश्मीर** में कपड़ों पर की जाने वाली कढ़ाई को 'अक्सी' कहा जाता है। यह दुनिया भर में प्रसिद्ध है। यह कढ़ाई अत्यंत बारीक सुई तथा पतले धागे से की जाती है।

(ii) **लखनऊ** भारत का प्रसिद्ध राज्य अपनी लखनवी कढ़ाई के लिए बहुत प्रसिद्ध है। इस कढ़ाई को बहुत ही बारीक धागों से सूक्ष्म रेखाओं पर कुशल कढ़ाई करके फ्रेंचनाट ओपन वर्क एवं हेरिंगबोन स्टिच द्वारा उभार जाली द्वारा किया जाता है।

(iii) **बनारस** अपने राज्य में होने वाली जरी की कढ़ाई के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यहाँ पर तैयार की जाने वाली सोने का पानी चढ़ी चाँदी की तार से कढ़ाई की जाने वाली साड़ियाँ विश्वभर में प्रसिद्ध हैं। जरी की सुनहरी साड़ियाँ, घाघरे, जूते, टोपियाँ तथा पर्स अपने जरदोजी के काम के कारण बहुत ही आकर्षक लगते हैं। सूरत भी अपने जरी के काम के लिए बहुत प्रसिद्ध है।

(iv) **पंजाब** अपनी फुलकारी की वस्त्र कला के कारण पूरे देश भर में प्रसिद्ध है। फुलकारी में वस्त्र की पूरी सतह पर फूल-पत्तियों की हाथ से कढ़ाई की जाती है। यह कढ़ाई खादी के वस्त्र पर तथा रेशमी धागों से की जाती है। यह पूर्णत: हस्तनिर्मित है।

(v) **राजस्थान** अपनी शीशों को जोड़कर कशीदाकारी के लिए विख्यात है। राजस्थानी कढ़ाई में गुजरात अथवा सिंध की कढ़ाई का समन्वय देखा जा सकता है। यहाँ लहंगों, घाघरों, चूनर तथा चोलियों में सुनहरी तारों के साथ, रेशमी धागों से कढ़ाई की जाती है। इनमें मोटे-मोटे शीशों तथा सीपों (कौड़ियों) का प्रयोग किया जाता है।

4. काँच की शिल्प कला (Glass Craft)—भारत में काँच के उत्पाद के विनिर्माण का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। काँच से निर्मित उत्पादों का वर्णन महाकाव्यों मुख्यत: महाभारत में देखा जा सकता है। भारत के दक्षिणी भाग में ताम्रपाषाणिक स्थल मस्की से भी काँच के पुरातात्विक प्रमाण मिलते हैं। हमें महाराष्ट्र के ब्रह्मपुरी तथा कोल्हापुरी में काँच उद्योग के पौराणिक साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। यहाँ लैंटीक्यूलर मनकों का निर्माण किया जाता था जिसे काँच द्वारा तैयार किया जाता था। इसके अतिरिक्त हमें हस्तिनापुर, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा उज्जैन आदि से भी काँच के उद्योग स्थापित होने के प्रमाण मिले हैं। काँच के हस्तशिल्प कला में मुगलों के शासन काल के अधीन अतुलनीय विकास हुआ। मुगल शासक कला प्रेमी थे तथा वे कलाकारों को बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने अपने शासनकाल में काँच की बनी वस्तुओं को तथा कलाकारों को संरक्षण प्रदान किया। मुगल काल में निर्मित शीश महल अपनी काँच की उत्कृष्ट कला के निर्माण के लिए संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। मुगल काल में स्मारकों में सजावट के रूप में इत्रदान, काँच से निर्मित हुक्के, बक्से आदि प्रमुख थे। वर्तमान समय में काँच से निर्मित वस्तुओं का प्रयोग बहुत ही साधारण हो चुका है। प्रत्येक घर में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा काँच से निर्मित वस्तुओं का उपयोग किया जाता है। काँच की चूड़ियाँ, मनके, खिलौने, झूमर, आईना, सजावट की वस्तुएँ, क्रॉकरी आदि घरेलू उपयोग की वस्तुएँ प्रत्येक व्यक्ति का अनिवार्य अंग बन चुकी हैं।

(i) **हैदराबाद** अपनी काँच की चूड़ियों के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। हैदराबाद में कई बड़े-बड़े चूड़ी बाज़ार हैं। जहाँ रंग-बिरंगी खूबसूरत डिज़ाइनों वाली चूड़ियाँ मिलती हैं।

(ii) **फिरोज़ाबाद** में काँच से बने झूमर तथा अन्य सजावटी वस्तुएँ विश्व भर में प्रसिद्ध हैं। यहाँ पर निर्मित वस्तुएँ काँच की वस्तुओं का आयात किया जाता है। यहाँ कई प्रकार के फ्लावर बेस, सजावटी लाइटें, बल्बों, कैंडल स्टैंड आदि बनाए जाते हैं।

(iii) **उत्तर प्रदेश** में काँच के उद्योग का प्रमुख केंद्र सहारनपुर है। यहाँ काँच से निर्मित बच्चों के खिलौने बनाए जाते हैं।

5. मृद्भांड शिल्प कला (Pottery Craft)—इसे मिट्टी के बर्तनों की सभी कलाओं में से सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता है। हड़प्पा सभ्यता के समय से ही भारत में हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तन बनाने की परंपरा प्रचलित है। मिट्टी के बर्तन रंग-बिरंगी मिट्टी तथा अनेक प्रकार के डिज़ाइनों से तैयार किए जाते हैं। मिट्टी से वस्तुएँ बनाना मनुष्य द्वारा प्रारंभिक शिल्पों में से एक रहा है। हड़प्पा सभ्यता की खुदाई से हमें मिट्टी से निर्मित खिलौने भी मिले हैं। उस समय मिट्टी की गुड़िया व गाड़ियाँ बनाई जाती थीं। प्राचीन काल के सबसे प्रसिद्ध मृद्भांड चित्रित धूसर मृद्भांड हैं।

(i) प्राचीन काल में **उत्तर प्रदेश** में पाए जाने वाले मिट्टी के बने बर्तनों को खुर्जा मृद्भांड कहा जाता था। ये बर्तन बहुत ही मज़बूत होते थे तथा रंग-बिरंगे रंगों से मिलकर बने हुए थे।

(ii) **राजस्थान**, अलवर में पायी जाने वाली मिट्टी के बर्तनों को कागज़ी मृद्भांड कहा जाता है। ये बर्तन पतले तथा बहुत कोमल होते थे इसी कारण इन्हें कागज़ी मृद्भांड कहा जाता था।

(iii) **जयपुर**, राजस्थान में मुलतानी मिट्टी से भी बनाए गए बर्तन पाए जाते हैं। मुलतानी मिट्टी से तैयार किए गए बर्तनों को नीले मृद्भांड कहा जाता है।

मूर्तिकला (Sculpture)

मूर्तिकला, कला की प्राचीनतम कला विधाओं में से एक है। भारतीय मूर्तिकला भारतीय सांस्कृतिक विरासत को दर्शाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मूर्तिकला में विभिन्न प्रकार के पदार्थों अर्थात् मिट्टी, टेराकोटा तथा कई प्रकार के पत्थरों से विभिन्न प्रकार की मूर्तियों की रचना की जाती है। मूर्तिकला अपनी उत्कृष्ट कला कौशल व सुंदरता के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसे भारत की प्रमुख कलाओं में से एक माना जाता है। मूर्तिकला भारत की प्रमुख सांस्कृतिक उपलब्धि है। मूर्तिकला को राष्ट्रीय कला माना जाता है।

मूर्तिकला के प्रकार
(Types of Sculpture)

मूर्तिकला के निम्नलिखित प्रकार पाए जाते हैं—

1. राहत (Relief)—राहत मूर्तिकला की सबसे प्रमुख कला है। 'Relief' शब्द लैटिन भाषा के शब्द Relevo का अंग्रेजी भाषा का रूपांतरित रूप है जिसका कला के क्षेत्र में अर्थ है 'उभार'। राहत मूर्तिकला में पृष्ठभूमि से थोड़ा सा उभार ला कर मूर्तियों की रचना की जाती है। ये कला रचनाएँ अपने धरातल से उभरी हुई होती हैं। राहत मूर्तिकला को कला का रूप देते समय इसकी पृष्ठभूमि को सपाट रखा जाता है तथा इसके ऊपर की जाने वाली कला को थोड़ा उभार कर प्रस्तुत किया जाता है। जिसे छूने से उसे महसूस किया जा सकता है। राहत मूर्तिकला में बनाई गई मूर्तियाँ बहुत ही आकर्षित लगती हैं। ये मूर्तियाँ अपने सपाट धरातल व अपनी फ्लोटिंग छवि के कारण दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं। राहत मूर्तिकला के निम्नलिखित चार प्रकार पाए जाते हैं—

(i) **कम राहत (Minimum Relief)**—यह राहत मूर्तिकला का एक अंश है। कम राहत मूर्तिकला उसे कहा जाता है जिसमें बहुत कम उभार देखने को मिलता है। धरातल से इसका उभार केवल नाममात्र ही होता है। इस प्रकार से बनी मूर्तियों को कम राहत मूर्तिकला कहा जाता है।

(ii) **मध्य राहत (Middle Relief)**—यह राहत मूर्तिकला का दूसरा भाग है। मध्य राहत मूर्तिकला, मूर्तिकला का वह रूप है जिसमें न तो उभार बहुत कम होता है तथा न ही बहुत अधिक उभार पाया जाता है।

(iii) **उच्च राहत (Maximum Relief)**—यह राहत मूर्तिकला का सर्वाधिक प्रमुख भाग है। उच्च राहत मूर्तिकला में वह मूर्तिकला आती है जिसका उभार सतह से बहुत अधिक होता है। उच्च राहत मूर्तिकला को बिना छुए दूर से भी उभार को महसूस किया जा सकता है।

(iv) **धँसा राहत (Deep Relief)**—इस प्रकार की राहत मूर्तिकला में मूर्तियाँ धरातल की सतह में धँसी हुई होती हैं। इनका उभार बाहर की ओर ज्यादा देखने को नहीं मिलता। बल्कि यह मूर्तिकला पृष्ठभूमि की सतह से नीचे होती है।

2. गोल मूर्तिकला (Round Sculpture)—गोल मूर्तिकला, कला की वह प्रकार है जिसमें मूर्तिकला पृष्ठभूमि से जुड़ी न होकर ऊपर की ओर होती है। जिसे किसी भी तरफ से देखा जाए तो दर्शक को इसके कई पूरक दृष्टिकोण प्राप्त होते हैं।

3. नक्काशीदार मूर्तिकला (Engraved Sculpture)—नक्काशीदार मूर्तिकला वह मूर्तिकला है जिसे सतह को छीलकर अथवा खुरचकर कोई रूप दिया जाता है। इस प्रकार की मूर्तिकला को बनाने के लिए सतह को हथौड़े,

छैनी की सहायता से ठोक-ठाक कर अर्थात् पत्थर की सतह पर चोट देकर एक कला-आकृति की जाती है। नक्काशी मूर्तिकला है। इस प्रकार की नक्काशी मूर्तिकला लकड़ी तथा पत्थर जैसी कठोर वस्तुओं पर की जाती है। नक्काशी मूर्तिकला का कार्य बहुत ही कुशल कारीगरों द्वारा किया जाता है। नक्काशीदार चित्रकला बहुत ही महीन कार्य होता है। यह कला की बहुत ही उत्कृष्ट उदाहरण है। नक्काशीदार मूर्तिकला इतनी सुंदर होती है कि इसे देखने वाले मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। परंतु मूर्तिकला का यह रूप बहुत ही कठिन होता है।

4. कास्ट मूर्तिकला (Casting Sculpture)—कास्ट मूर्तिकला में मूर्तिकला बनाने के लिए एक साँचे का प्रयोग किया जाता है। इसमें कलाकार द्वारा जिस भी प्रकार की सामग्री अथवा पदार्थ से मूर्ति का निर्माण करना होता है उसे पिघलाकर साँचे में डाल दिया जाता है। साँचे में डालने के पश्चात् वह पिघला हुआ पदार्थ उस साँचे का रूप ले लेता है। कलाकार द्वारा जिस भी आकार की मूर्तिकला का निर्माण करना होता है वह उस प्रकार के साँचे का निर्माण करके उसमें घोल को डालकर उसे साँचे जैसी मूर्ति का रूप दे दिया जाता है।

5. ढलाई मूर्तिकला (Molding Sculpture)—ढलाई मूर्तिकला में कलाकार मूर्तियाँ बनाने के लिए मोम या प्लास्टर जैसी नरम सामग्री का प्रयोग करते हैं। अन्य प्रकार की मूर्तिकलाओं में यदि एक बार किसी प्रकार की मूर्ति का निर्माण कर दिया जाए तो उसमें से कुछ जोड़ना या घटाना एक कठिन कार्य हो जाता है। परंतु इस प्रकार की मूर्तिकला में नरम सामग्री का प्रयोग किया जाता है ताकि उसे तोड़-जोड़ कर एक वांछित मूर्ति का निर्माण किया जा सके।

6. स्थापना मूर्तिकला (Installation Sculpture)—स्थापना मूर्तिकला में मूर्तियों को स्थल विशिष्ट मूर्तियों के रूप में भी जाना जाता है। इन मूर्तियों को बड़ी-बड़ी जगहों में स्थापित करने के उपलक्ष्य से बनाया जाता है। मूर्तिकार द्वारा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का प्रयोग करके विशालकाय मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। तदोपरांत इन मूर्तियों को किसी चौराहे अथवा किसी विशेष स्थान पर स्थापित किया जाता है। इसे स्थापना मूर्तिकला का नाम इसलिए दिया गया है क्योंकि एक स्थान पर इनकी स्थापना करने के उपरांत इनका वहाँ से स्थान परिवर्तन नहीं किया जाता।

7. घटाव मूर्तिकला (Subtraction Sculpture)—घटाव मूर्तिकला, मूर्तिकला श्रेणी की सबसे पुरातन मूर्तिकला है। यह मूर्तिकला बहुत ही कठिन है। इसे बनाने के लिए बहुत ही कुशल कारीगरों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की मूर्तिकला में मूर्ति बनाने के पश्चात् उसे अंदर की ओर थोड़ा-थोड़ा घटाया जाता है। इसे आगे की तरफ से थोड़ा-सा अंदर की ओर घटाया जाता है। घटाव मूर्तिकला शेष प्रकार की मूर्तिकला में से सबसे कठिन है।

मूर्तिकला की विशेषताएँ
(Features of Sculpture)

भारतीय कला में, आनंद व सौंदर्य कला की मूल विशेषताएँ रही हैं। इसके अतिरिक्त मूर्तिकला की मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

1. भद्रासन (Bhadrasana)—भद्रासन स्थिति में बनी मूर्तियों की मुख्य विशेषता यह है कि इस प्रकार की मूर्तियाँ प्राय: दोनों पैरों को खोलकर सीधे स्थित अवस्था में बनाई जाती हैं। भद्रासन मुद्रा में बनाई गई मूर्तियाँ बड़े शांत स्वभाव को प्रदर्शित करती हैं। ये मूर्तियाँ बहुत ही आकर्षित होती हैं इन्हें देखकर कोई भी व्यक्ति मंत्रमुग्ध हो जाता है।

2. समभंग (Sambhanga)—समभंग अवस्था में बनी मूर्तियों की मुख्य विशेषता यह है कि इस प्रकार की मूर्तियाँ बिल्कुल सीधे खड़ी अवस्था में बनाई जाती हैं। इस प्रकार की मूर्तिकला में शून्य रहकर सीधे खड़े रहना तथा शरीर के दोनों ओर के भाग समान रूप से दिखाई देते हैं। कर्नाटक में गोमतेश्वर बाहुबली की प्रतिमाएँ समभंग मूर्तिकला की मुख्य उदाहरण हैं।

3. अभंग (Abhanga)—अभंग मुद्रा में बनी मूर्तियाँ लगभग समभंग मुद्रा जैसी ही होती हैं परंतु इनका एक घुटना में बनी मूर्तियों की मुख्य विशेषता यह होती है कि ये मूर्तियाँ बनी तो सीधी होती हैं स्वाभाविक रूप में थोड़ा-सा आगे की ओर मुड़ा हुआ होता है। इस प्रकार की मूर्तियाँ देखने में बहुत ही सुंदर प्रतीत होती हैं।

4. त्रिभंग (Tribhanga)—भारतीय मूर्तिकला में मूर्तियों की सर्वाधिक प्रसिद्ध मुद्रा त्रिभंग मुद्रा है। त्रिभंग दो शब्दों त्रि + भंग अर्थात् तीन भागों से मुड़ी हुई से बना है। इसे अंग्रेजी भाषा में (Triple Bend) कहा जाता है। त्रिभंग एक स्थाई शरीर की स्थिति है जिसे भारतीय नृत्य ओडिसी जैसे रूपों, जहाँ शरीर घुटनों पर एक दिशा में, कूल्हों पर दूसरी दिशा और फिर कंधे और गर्दन पर दूसरी दिशा में झुकता है। भारतीय नृत्य कला में पाए जाने वाले ओडिसी नृत्य कला एवं भरत नाट्यम में भी त्रिभंग मुद्राएँ देखी जा सकती हैं। अर्धनारीश्वर व भूतेश्वर यक्ष की मूर्तियाँ इस मुद्रा में बनी मूर्तिकला की प्रमुख उदाहरणें हैं।

5. अतिभंग (Atibhanga)—अतिभंग से भाव है कई भागों से मुड़ा होना। इस प्रकार की मुद्रा में बनी मूर्तियों में शरीर के कई स्थानों पर वक्रता दिखाई देती है। नटराज की मूर्तियाँ इसी मुद्रा में बनी पाई जाती हैं।

6. शालभंजिका (Shalabhanjika)—शालभंजिका मुद्रा में बनी मूर्तियाँ बड़ी आकर्षित दिखाई देती हैं। साँची स्तूप के तोरणद्वारों में बनी अनेक मूर्तियों का संबंध शालभंजिका मुद्रा से है। इस मुद्रा का विशेष रूप से नारी आकृतियों में प्रयोग हुआ है। वृक्ष की शाखा का सहारा लिए हुए त्रिभंग अर्थात् शरीर के तीन भागों से मुड़ी हुई नारी की मूर्तियाँ अत्यधिक सुंदर प्रतीत होती हैं। लोक परंपरा में यह माना जाता था कि स्त्री द्वारा पेड़ की शाखा को छुए जाने से वृक्षों में फूल खिल उठते हैं तथा उन पर फल लगने लगते हैं। शालभंजिका को एक शुभ प्रतीक माना जाता था।

7. पद्मासन (Padmasana)—पद्मासन मुद्रा में दोनों पैर के तलवे ऊपर की ओर एक सीध में करके, पलाथी लगाकर बैठने की स्थिति का नाम ही पद्मासन है। पद्मासन शब्द संस्कृत भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ है कमल का पद। ये मुद्रा एक योगा है जिसका प्रयोग शरीर व मस्तिष्क में स्थिरता लाने के लिए किया जाता है। इस मुद्रा में बनी मूर्तियाँ पलाथी मार कर बैठी हुई तथा आँखें मूंदे होती हैं। इस प्रकार की मुद्रा में बनी महात्मा बुद्ध की सर्वाधिक मूर्तियाँ देखी जा सकती हैं।

8. अर्द्ध पद्मासन (Half Padmasana)—इस प्रकार की मुद्रा में एक पैर के तलवे को उल्टा करके पलाथी लगाकर बैठने की स्थिति अर्द्ध पद्मासन कहलाती है।

9. ललितासन (Lalitasana)—ललितासन भारतीय कला में एक मुद्रा है तथा अन्य देशों में यह धार्मिक धर्मों की कला है। इसे शाही स्थिति व शाही सहजता भी कहा जाता है। इस मुद्रा में एक पैर पलाथी की स्थिति में, दूसरे का घुटना उठा हुआ तथा बायीं हथेली पर शरीर का भार डालते हुए बैठने की स्थिति ललितासन है। इस प्रकार की मूर्तियों में राजा की विशेषताओं पर बल दिया जाता है। अजंता की गुफाओं में इस प्रकार के कई चित्र प्राप्त हुए हैं।

10. महाराज लीलासन (Maharaja Leelasana)—महाराज लीलासन भी योग की एक मुद्रा है। कला के क्षेत्र में इस मुद्रा में अनेक मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। इस मुद्रा में कुर्सी पर एक पैर को लटकाकर एक पैर ऊपर तथा शरीर कुछ लेटी हुई स्थिति में बायीं कुहनी पर झुका हुआ होता है।

11. शयन मुद्रा (Shayan Mudra)—भारतीय कला में इस मुद्रा में हिंदु धर्म से संबंधित कई मूर्तियों का निर्माण किया गया है। शेषनाग पर लेटे हुए विष्णु भगवान की मूर्ति, बुद्ध के निर्वाण की मूर्ति, राम चंद्र जी एवं कौशल्या माता की बहुत-सी मूर्तियाँ शयन मुद्रा में देखने को मिलती हैं।

लघु चित्रकला
(Miniature Painting)

भारत ने वैदिक काल से ही कला, वास्तुकला और मूर्तिकला की समृद्ध संस्कृति को विरासत में प्राप्त किया है। भारतीय संस्कृति को कला के प्रत्येक पक्ष मे समृद्ध व विकसित माना जाता है। भारत में लगभग दस प्रकार की चित्रकारी की शाखाएँ पाई जाती हैं। उदाहरणतया मधुबनी पेंटिंग, वाली पेंटिंग, कालीघाट पेंटिंग या बंगाल पट्टी, पट्टों, कमलकारी, गोंड पेंटिंग केरल भित्ति चित्र, पटचित्र, पिचवाई अथवा लघु चित्रकारी। लघु चित्रकला से तात्पर्य है वे हस्तनिर्मित चित्र जोकि आकार में बहुत छोटे हैं। लघु चित्रकला को लिमिंग, छोटा तथा बारीक गढ़ा हुआ चित्र भी कहा जाता है। बंगाल के पाल शासकों को भारत में लघु चित्रकला का अग्रदूत माना जाता है। लेकिन 16वीं शताब्दी में मुगल शासन के दौरान लघु चित्रकारी कलारूप अपने चरम पर पहुँच गया। लघु चित्रकारी कला को किशनगढ़, बूंदी, जयपुर, मेवाड़, मारवाड़ सहित चित्रकला के विभिन्न राजस्थानी स्कूलों के कलाकारों अथवा पहाड़ी स्कूलों के कलाकारों ने आगे बढ़ाया।

I. लघु चित्रकला का इतिहास
(History of Miniature Painting)

भारतीय लघु चित्रकला का आरंभ 6वीं-7वीं शताब्दी के मध्य में हुआ। लगभग 750 ई० के आस-पास भारत के पूर्वी भाग पर पालों का शासन था। पाल शासक बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। उन्होंने बौद्ध धर्म की शिक्षाओं तथा उनकी छवियों को ताड़-पत्रों पर चित्रित करवाया। इन चित्रों के दोनों ओर के हाशियों पर हस्तलिपि में कथा अंकित होती थी। इसके पश्चात् गुजरात में जैन धर्म से संबंधित चित्र व स्वामी महावीर से संबंधित प्रसंग लघु चित्रण का विषय बने। 960 ई० में, चालुक्य वंश के शासकों के द्वारा भारत के पश्चिमी भागों में इसी प्रकार के चित्रों का आरंभ किया गया। लघु चित्रकला में मुख्यत: धार्मिक विषयों को ही प्रमुखता दी जाती थी। 16वीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य के उदय के पश्चात् लघु चित्रकला में अद्भुत विकास हुआ। इस समय चित्रकला अपने चरम सीमा तक पहुँच गई। मुगल काल में अकबर के शासनकाल में बहुत-से लघु चित्रों का निर्माण हुआ। मुगल शासनकाल के पतन के उपरांत लघु चित्रकला अथवा लघु चित्रकारों को राजस्थान के राजपूत शासकों द्वारा संरक्षण दिया गया। इन लघु चित्रों में भगवान कृष्ण एवं राधा के जीवन से संबंधित पौराणिक गाथाओं को भी चित्रित किया गया। लघु चित्रों में अधिकाँश राजाओं की बहादुरी तथा उनकी जीवन शैली को दर्शाया गया है। राजपूत शासकों के उपरांत 18वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के मध्य लघु चित्रकला को पहाड़ी राजाओं द्वारा संरक्षण प्रदान किया गया। पहाड़ी लघु चित्रकला में हिंदू धर्म पर आधारित चित्रों को चित्रित किया गया। लघु चित्रों का मुख्यत: विषय हिंदू धर्म से संबंधित तथा राजाओं की बहादुरी व उनकी जीवन शैली एवं जीवन संबंधी घटनाओं को दर्शाना ही होता था।

तत्त्व
(Elements)

लघु चित्रकला के तीन प्रमुख तत्त्व होते हैं जिसके बिना लघु चित्रकला का कोई अस्तित्व नहीं देखा जा सकता। जिनका वर्णन निम्न प्रकार है—

1. लघु चित्रकारी के विषय (Subjects of Miniature Paintings)—लघु चित्रकारी के मुख्य: विषय हिंदू धर्म से संबंधित देवी-देवताओं के चित्रों को चित्रित करना तथा राजाओं एवं रानियों के जीवन शैली के बारे में चित्रित करना था। लघु चित्रकला में राजाओं की बहादुरी के कारनामों को दर्शाना एक महत्त्वपूर्ण विषय रहा है। बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ भी लघु चित्रकला का एक महत्त्वपूर्ण अंग रही हैं। पाल शासकों द्वारा ताम्र पत्रों पर इन शिक्षाओं को चित्रित करवाया गया था। लघु चित्रकला में चित्र के दोनों ओर के हाशियों पर हस्तलिपि में कथा अंकित होती थी।

... (Material)—लघु चित्रों में प्रयुक्त ...

(i) **ब्रश (Brush)**—लघु चित्रकारी के लिए सर्वप्रथम ब्रश की आवश्यकता होती है जो कि गिलहरी के बालों से अलग-अलग आकार के गोल एवं सपाट ब्रश बनाए जाते हैं। इनके बिना तो चित्रकारी के बारे में सोचना ही असंभव है।

(ii) **बर्निंग स्टोन (Burning Stone)**—यह एक दूसरी अनिवार्य वस्तु है। इसका प्रयोग खड़िया और गोंद के मिश्रण के साथ लेपित एक हस्तनिर्मित कागज़ पर रगड़ने के लिए किया जाता है। यह सतह को चिकना बनाने में सहायक होता है।

(iii) **कच्चा माल (Raw Material)**—लघु चित्रकला में कई प्रकार के रंगों का प्रयोग किया जाता है। ये रंग विभिन्न प्रकार के पत्थरों व फूलों से प्राप्त किए जाते हैं।

(iv) **सीप (Shells)**—इनका प्रयोग रंग रखने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त इनका प्रयोग रंगों को मिलाने वाले कटोरे के रूप में भी किया जाता है।

3. पृष्ठभूमि (Background)—लघु चित्रकला में तीसरा प्रमुख तत्व है पृष्ठभूमि। इससे तात्पर्य है कि चित्र बनाने से पूर्व देखा जाए कि चित्र को कहाँ बनाना उपयुक्त होगा। लघु चित्रकला की आरंभिक पृष्ठभूमि ताड़-पत्र थी। सर्वप्रथम लघु चित्रों को ताड़-पत्रों पर चित्रित किया जाता था। उसके पश्चात् इसे कागज़ पर चित्रित किया जाने लगा। कागज़ के उपरांत इनका चित्रण दीवारों पर भी होने लगा।

लघु चित्रकारी के स्कूल
(School of Miniature Paintings)

भारत में लघु चित्रकारी को और अधिक विकसित करने के उद्देश्य से चित्रकारी से संबंधित कई स्कूलों की स्थापना की गई। इन चित्रकारी के स्कूलों के द्वारा लघु चित्रकला के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया गया। लघु चित्रकला शैली के स्कूलों में प्रमुख स्कूलों के नाम निम्न प्रकार हैं—

1. पाला स्कूल, 2. जैन स्कूल, 3. मुग़ल स्कूल, 4. राजस्थानी स्कूल, 5. पहाड़ी स्कूल, 6. दक्कन स्कूल।

इनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है—

1. पाला चित्रकला स्कूल (Pala School of Paintings)—आठवीं शताब्दी में उत्तरी भारत में जिन प्रसिद्ध राजवंशों की स्थापना हुई उनमें पाल वंश सर्वाधिक प्रसिद्ध था। इस वंश के शासकों ने 400 वर्ष तक बंगाल में शासन किया। पाल वंश के शासक बौद्ध धर्म में विश्वास रखते थे। अत: उनके शासनकाल में बौद्ध धर्म से संबंधित अधिकाँश चित्र बनाए गए। ये चित्र ताड़-पत्रों के बीचों-बीच लघु आकार के बनाए गए और चित्रों के दोनों ओर के हाशियों पर हस्तलिपि में कथा अंकित होती थी। इस प्रकार लघु चित्र शैली प्रकाश में आई थी। पाल शासकों ने लघु चित्रकला के क्षेत्र में उन्नति करने के उद्देश्य से चित्रकला स्कूलों की स्थापना की। उनकी चित्रकला की विशेषताएँ निम्नलिखित थीं—

(i) इस काल के चित्रकारों ने बौद्ध धर्म की महायान शाखा से संबंधित चित्र बनाए।

(ii) इस काल में महात्मा बुद्ध के भी अनेक चित्र बनाए गए।

(iii) इस काल में जो बौद्ध ग्रंथ लिखे गए उन्हें विभिन्न प्रकार के चित्रों से सुसज्जित किया गया।

(iv) इस काल में अनेक भित्ति चित्र बनाए गए। इन चित्रों को दीवार पर चूने आदि का लेप बनाकर बनाया जाता था।

(v) इस शैली के चित्रकारों ने लाल, नीले, सफ़ेद, पीले ...

2. जैन चित्रकला स्कूल (Jaina School of Paintings)—लघु चित्रकला के विकास में जैन चित्रकला स्कूल ने भी उल्लेखनीय योगदान दिया। 11वीं शताब्दी में जैन स्कूल ऑफ पेंटिंग ने उस समय प्रमुखता प्राप्त की जब 'कल्प सूत्र' तथा 'कालकाचार्य कथा' जैसे धार्मिक ग्रंथों को लघु चित्रों को चित्रित किया गया था। जैन चित्रकला स्कूलों में भी लघु चित्रों को ताड़-पत्रों पर चित्रित किया गया था। इनकी चित्रकला की विशेषताएँ निम्न प्रकार थीं—

(*i*) इन चित्रों को चित्रित करने के लिए सोने एवं चाँदी सहित प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया गया था।

(*ii*) इन चित्रों में बड़ी हुई आँखों का चित्रण चौकोर आकार के हाथ और मनभावन आकृतियों का चित्रण शामिल है।

(*iii*) इन चित्रों में अधिकतर हरे, लाल, नीले तथा सोने जैसे रंगों का प्रयोग किया जाता है।

(*iv*) इन चित्रों में प्राय: पुरुष आकृतियों और देवियों को प्रदर्शित किया जाता था।

3. मुग़ल चित्रकला स्कूल (Mughal School of Paintings)—16वीं शताब्दी में लघु चित्रकारी शैली में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया। इस समय लघु चित्रकला का विकास अपनी चरम सीमा तक पहुँच गया था। बाबर ने भारत में मुग़ल वंश की स्थापना की थी। वह एक कला प्रेमी था। उसने चित्रकला के क्षेत्र में विकास करने के लिए बहुत योगदान दिया। बाबर का पुत्र हुमायूँ भी कला से बहुत प्रेम करता था। अकबर के शासनकाल में तो कला का स्तर बहुत ही ऊँचा हो गया था। उसने चित्रकला को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कलाकारों को संरक्षण दिया तथा उन्हें दरबार में ऊँचे पदों पर नियुक्त भी किया। जहाँगीर के शासनकाल में मुग़ल चित्रकला अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँच गई थी। इस काल को भारतीय चित्रकला का स्वर्ण युग कहा जाता है। इन मुग़ल शासकों ने कला के विकास के लिए कई चित्रकला स्कूलों का प्रबंध किया ताकि चित्रकला को बढ़ावा मिल सके। मुग़ल चित्रकला की मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

(*i*) भारतीय चित्रों और फ़ारसी लघु चित्रों के समामेलन मुग़ल शैली की लघु चित्रकला का रूप था।

(*ii*) मुग़ल चित्रकारों ने प्राकृतिक दृश्यों का बहुत सुंदर चित्रण किया।

(*iii*) मुग़ल शैली में अधिकतर चित्रों के चारों ओर सुंदर हाशिए बनाए गए।

(*iv*) मुग़लों में पर्दा प्रथा होने के कारण नारी चित्रण बहुत कम हुआ है।

औरंगज़ेब के शासनकाल के साथ मुग़ल लघु चित्रों का पतन आरंभ हो गया था क्योंकि उसने कला के अभ्यास तथा विशेष रूप से लघु चित्रों की निंदा की थी।

4. राजस्थानी चित्रकला स्कूल (Rajasthani School of Paintings)—मुग़ल लघु चित्रों के पतन के परिणामस्वरूप राजस्थानी शैली का उदय हुआ। मुग़ल शासकों की भाँति राजपूत शासक भी कला के प्रेमी थे तथा वे भी लघु चित्रकला को अपना संरक्षण देते थे। राजपूत काल में लघु चित्रकला के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व विकास हुआ। इस काल में चित्रकला के प्रसिद्ध केंद्र मेवाड़, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, बूंदी, कटोच, कृष्णगढ़, बसोहली, काँगड़ा, गुलेर, गढ़वाल, जम्मू, नूरपुर, चंबा, मंडी तथा बिलासपुर थे। इस काल की चित्रकला की प्रमुख विशेषताएँ ये थीं—

(*i*) चित्रों में रेखाओं का प्रयोग बहुत कम किया गया है।

(*ii*) चित्रों में चटकीले रंगों का प्रयोग किया गया है।

(*iii*) इस काल की चित्रकला का मुख्य विषय राधा तथा कृष्ण का प्रेम है।

(iv) इस काल की चित्रकला जनजीवन का प्रतिनिधित्व ...

(v) इस काल में घरेलू जीवन से संबंधित चित्र बनाए गए।

5. पहाड़ी चित्रकला स्कूल (Pahari School of Paintings)—पहाड़ी चित्रकला का विकास 18वीं से 20वीं शताब्दी के मध्य हुआ। इस चित्रकला का विकास हिमाचल एवं पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों में हुआ। इस चित्रकला के प्रमुख केंद्र गुलेर, काँगड़ा, बसोहली, कुल्लु, गढ़वाल पहाड़ी चित्रकला के अधीन चित्रकारों ने अति सुंदर एवं सजीव चित्र बनाए। इस चित्रकला के विकास में यहाँ की प्राकृतिक छवि एवं सुंदरता ने चार चाँद लगा दिए। पहाड़ी चित्रकला की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(i) इस चित्रकला का प्रमुख विषय वैष्णव धर्म रहा है।

(ii) इस चित्रकला के अधीन राधा कृष्ण के सर्वाधिक चित्र बनाए गए।

(iii) इस चित्रकला के अधीन काफी संख्या में दरबारी चित्र बनाए गए।

(iv) इस शैली में लोक जीवन से संबंधित चित्र भी बनाए गए।

(v) इस शैली के चित्रों की पृष्ठभूमि प्राकृतिक है।

6. दक्कन चित्रकला स्कूल (Deccan School of Paintings)—16वीं-19वीं शताब्दी तक अहमदनगर, गोलकोंडा, हैदराबाद तथा बीजापुर जैसे स्थानों में डेक्कन स्कूल ऑफ मिनिएचर पेंटिंग का विकास हुआ। ये पेंटिंगस अपने मुगल समकक्ष से अलग हैं। इसका विकास मुग़ल चित्रकला से भिन्न रूप में हुआ। इस शैली का मुख्यत: विकास बीजापुर, अहमदनगर एवं गोलकोंडा की सल्तनतों में विशेष रूप से हुआ। इन सल्तनतों में लघु चित्रकला को विकसित करने के लिए कई चित्रकला स्कूल खोले गए। इस चित्रकला की मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

(i) इस चित्रकला में गहरे रंगों और कामुक दिखने वाली स्त्रियों की आकृतियों को दर्शाया गया है।

(ii) इनमें पेड़-पौधों तथा प्राकृतिक सुंदरता दिखाने वाले चित्रों को दर्शाया गया है।

(iii) इन चित्रों में ज्यामितीय रूप से स्टीक इमारतों तथा मानव निर्मित चमत्कारों को चित्रित किया गया है।

(iv) इन चित्रों में महिलाओं को सुंदर चेहरे, चौड़े माथे तथा बड़ी-बड़ी आँखों वाली दर्शाया गया है।

फ्रेस्को
(Fresco)

भारतीय चित्रकला का इतिहास बहुत ही प्राचीन है। चित्रकला को आगे कई अंगों में बाँटा गया है। फ्रेस्को चित्रकला पद्धति का एक अभिन्न अंग है। 'फ्रेस्को' दीवार या छत पर सीधे पेंटिंग करने का पारंपरिक माध्यम है। फ्रेस्को विधि में एक दीवार की पलस्तर की सतह को बुझे हुए चूने से भिगोया जाता है। प्लास्टर सेट होने से पूर्व ही चित्रकार द्वारा उस पर चित्रकारी पूर्ण कर दी जाती है।

इतालवी पुनर्जागरण फ्रेस्को पेंटिंग का महान् काल था। इस काल में कई फ्रेस्को पेंटिंग का निर्माण किया गया। 16वीं शताब्दी के मध्य में सिस्टिन चैपल में माइकल एंजेलो की पेंटिंग 'द क्रिएशन ऑफ एडम' सीलिंग फ्रेस्को पेंटिंग की एक उत्कृष्ट उदाहरण है। भित्ति चित्रों को सबसे टिकाऊ बनाने का तरीका फ्रेस्को पेंटिंग है और वेटिकन में राफेल के स्टैंज़ा भित्ति चित्र सभी भित्तिचित्रों में सबसे प्रसिद्ध हैं। फ्रेस्को चित्रकला का उपयोग बड़े पैमाने पर तेल चित्रकला द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था।

फ्रेस्को का अर्थ
(Meaning of Fresco)

'फ्रेस्को' शब्द इतालवी भाषा के शब्द 'फ्रेश' से बना है तथा फ्रेश का हिंदी रूपांतरण शब्द है 'ताजा'। फ्रेस्को चित्रकारी से अभिप्राय उन चित्रों से है जिन्हें दीवारों व छतों पर पलस्तर की सतह को चूने से भिगोकर उस पर ताजी-ताजी गीली सतह पर ही पेंटिंग की जाती थी।

इन पेंटिंग्स को चित्रण योग्य बनाने के लिए उन पर लोहे के अंश वाली चिकनी मिट्टी में गोबर व धान की भूसी, बजरी या रेत अथवा गोंद आदि का घोल मिलाकर आधा इंच मोटी तह लीप देते थे।

बूनो (Buno)—बूनो फ्रेस्को का एक ही एक अभिन्न अंग है। बूनो शब्द इतालवी शब्द 'बियानकों' से निकला है जिसका अर्थ होता है बहुत सफेद चूना। फ्रेस्को चित्रकारी में चित्रकारी करने के लिए सफेद चूने को पानी में भिगोकर गाढ़ा-गाढ़ा लेप बनाकर दीवारों व छतों पर लीप दिया जाता है। बहुत सफेद चूने के घोल से बने चित्रों को फ्रेस्को बूनो चित्र कहा जाता है। फ्रेस्को बूनो चित्र भित्ति चित्रों को चित्रित करने का सबसे टिकाऊ तरीका है।

फ्रेस्को चित्रकारी बनाने की तकनीक
(Techniques of Fresco Paintings)

फ्रेस्को चित्रकारी को बनाने के लिए सर्वप्रथम जिस छत अथवा दीवार पर चित्रकारी की जाती है उस दीवार अथवा छत को किसी पत्थर की सहायता से खुरदरा किया जाता है। उसके उपरांत उस पर चिकनी मिट्टी में गोबर व धान की भूसी, बजरी व रेत, वनस्पतियों के रेशे व गोंद अथवा सरेस का घोल मिलाकर आधी इंच तक मोटी तह लीप देते थे। तदोपरांत इसी के ऊपर चिकनी मिट्टी, बारीक रेत व सफेद चूने का प्लास्टर चढ़ाते थे। फ्रेस्को चित्रकारी करने वाले चित्रकारों का बहुत कुशल व सक्षम होना अनिवार्य है क्योंकि इस प्रकार के चित्रों को एक ही दिन में गीले-गीले धरातल पर बनाना अनिवार्य होता है। यदि ये गीला धरातल सूख जाए तो उस पर चित्रण करना कठिन नहीं बल्कि असंभव होगा क्योंकि चित्रण कार्य में यदि विलंब डाल दिया जाए तो प्लास्टर पर गर्मी, ठंडक या वायु की लहर से एक पपड़ी जम जाती है जिससे चित्रकार के लिए चित्र का रूप देना असंभव हो जाता है।

गुण
(Merits)

1. मजबूत (Strong)—फ्रेस्को चित्रकारी विधि से तैयार किए गए चित्र बहुत ही मजबूत होते हैं। क्योंकि इसे बनाने से पूर्व इसके धरातल को पहले खुरदरा करके उस पर चार सतह प्लास्टर की लगाई जाती हैं। इस प्लास्टर में चूना, संगमरमर, चूना व बजरी का घोल बनाकर डाला जाता है जिससे यह बहुत मजबूत हो जाता है।

2. रंगीन (Colourful)—फ्रेस्को चित्रकारी विधि से तैयार की गई चित्रकारी बहुत ही रंगीन होती है। इस चित्रकारी में प्रत्येक प्रकार के रंग हिरौंजी (गहरा लाल), गेरू (लाल रंग), रामरज (बादामी पीला), मुलतानी (पीला), सब्ज रंग (गहरा हरा) आदि सभी प्रकार के चटकीले रंगों का प्रयोग किया जाता है।

3. स्थायी (Permanent)—फ्रेस्को चित्रकारी विधि से तैयार की गई चित्रकारी स्थायी होती है। इसे बनाने में प्रयोग किए गए सामान रेत, बजरी, संगमरमर के बुरादे के कारण इसमें बहुत मजबूती आ जाती है। जिस कारण इनमें स्थिरता पाई जाती है। फ्रेस्को चित्रकारी से पूर्व जब धरातल को चित्रकारी के लिए तैयार किया जाता है तो सर्वप्रथम उस पर तीन-चार तह प्लास्टर की लगाई जाती है जिससे वह और मजबूत बनती है। जिससे उनके स्थायीपन में वृद्धि होती है। अजंता की दीवारों में की गई फ्रेस्को चित्रकारी की उदाहरणें आज भी देखी जा सकती हैं।

4. सजीव (Live)—फ्रेस्को चित्रकारी विधि से तैयार की गई चित्रकारी बहुत ही सजीव प्रतीत होती है। गीले-गीले संगमरमर व चूने के घोल से तैयार की गई मूर्तियों में मानों चित्रकार द्वारा जान डाल दी गई हो। इन मूर्तियों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो ये मूर्तियाँ अभी बोल उठेंगी।

सावधानियाँ
(Precautions)

फ्रेस्को चित्रकारी को रूप देते समय कुछ आवश्यक बातों को ध्यान में रखना बहुत आवश्यक है। जिनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है—

1. धरातल को खुरदरा बनाना (To make surface rough)—फ्रेस्को चित्रकारी को करने से पूर्व इसके धरातल को किसी ईंट व नुकीले यंत्र द्वारा ठोक-ठोक कर खुरदरा बनाया जाता है। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि धरातल पर से उसके पुराने प्लास्टर को हटाया जा सके।

2. सीलन न होना (It should not be damp)—चित्रकारी करने से पूर्व ये देख लेना अनिवार्य है कि धरातल पर किसी प्रकार की सीलन न हो। यदि चित्रकारी कार्य आरंभ करने से पूर्व धरातल की सीलन को न समाप्त किया जाए तो पूर्ण चित्रकारी व्यर्थ जा सकती है।

3. धरातल को सपाट बनाना (To make surface plain)—चित्रकारी से पूर्व धरातल को सपाट बनाना बहुत अनिवार्य है। यदि धरातल में किसी प्रकार के गड्ढे हैं तो इन्हें चित्रकारी करने से पूर्व भरना अति आवश्यक है। अन्यथा आप एक सुंदर चित्रकारी के बारे में सोच भी नहीं सकते। इसलिए इसे खुरदरा बनाने के पश्चात् इसे सपाट बनाना अनिवार्य है।

4. धरातल के खोखलेपन को भरना (To fill hollowness of the surface)—चित्रकारी करने से पूर्व जिन सावधानियों को ध्यान में रखना चाहिए उनमें से सबसे प्रमुख है कि हमें धरातल के खोखलेपन को दूर करना चाहिए। ऐसा करने के लिए धरातल पर दो तीन तहें प्लास्टर की लगा दी जाती हैं ताकि उसका खोखलापन समाप्त किया जा सके।

रंगोली
(Rangoli)

रंगोली भारतीय उपमहाद्वीप में उत्पन्न होने वाला एक कला रूप है। भारत जैसे सांस्कृतिक देश में जहाँ त्यौहारों का आए दिन मेला लगा रहता है ऐसे देश में रंगों का बहुत महत्त्व है। यह रंग ही तो हैं जो त्यौहारों में जान डालते हैं। रंगोली एक ऐसी कला का रूप है जो भारत में अपने सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्त्व के लिए प्रमुख रूप से जानी जाती है। यह भारतीयों के जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है। इस मनोरम कला रूप के बिना कोई भी त्यौहार अधूरा है। रंगोली विशेषत: गणेश चतुर्थी, दुर्गा अष्टमी तथा दीपावली आदि पर मुख्यत: बनाई जाती है।

I. रंगोली का अर्थ
(Meaning of Rangoli)

प्राचीनतम दृष्टि से रंगोली संस्कृत भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ है रंगों के जरिए भावों को अभिव्यक्त करना। रंगोली को रंगावली भी कहा जाता है। यह रंग + आवली दो शब्दों से मिलकर बना था। रंगावली का अर्थ था सुंदर रंगों की पंक्ति अथवा लताएँ। धीरे-धीरे रंगावली शब्द रंगोली शब्द में परिवर्तित हो गया।

II. रंगोली का इतिहास
(History of Rangoli)

रंगोली धार्मिक, सांस्कृतिक आस्थाओं का प्रतीक रही है। इसे आध्यात्मिक प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है। रंगोली जैसी सुंदर व मनोरम कला की उत्पत्ति से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए रंगोली से संबंधित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन निम्न प्रकार है—

1. वैदिक काल से संबंधित (Related with Vedic Age)—रंगोली की जड़ें हिंदू धर्म के वैदिक काल से ही पाई जाती हैं। उस समय विभिन्न हवनों एवं यज्ञों में वेदी का निर्माण करते समय भी रंगोली का निर्माण किया जाता था। इसके पीछे भूमि शुद्धिकरण की भावना तथा समृद्धि का आह्वान निहित था। वे स्वयं को बुरी तथा नकारात्मक ऊर्जाओं से बचाने के लिए तथा सकारात्मक ब्रह्मांडीय शक्ति को आकर्षित करने के लिए ज्यामितीय आकृतियाँ बनाते थे। आधुनिक समय में भी पारंपरिक पूजा का आरंभ करते समय एक साफ लकड़ी के मंच पर आठ पंखुड़ियों वाले कमल के फूल का डिजाइन बनाना सामान्य बात है। इसे हल्दी, फूल और सिंदूर से सजाया जाता है और देवताओं की पूजा अथवा उनका आह्वान किया जाता है।

2. मोहनजोदड़ो व हड़प्पा संबंधित (Related with Mohanjodaro and Harappa)—रंगोली का जन्म मोहनजोदड़ो व हड़प्पा काल से संबंधित माना जाता है। मोहनजोदड़ो व हड़प्पा की खुदाई में प्राप्त इमारतों व घरों की दीवारों से रंगोली मांडी हुई प्राप्त हुई है। जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि रंगोली का प्रचलन हड़प्पा व मोहनजोदड़ो के समय में भी था। मोहनजोदड़ो की खुदाई से प्राप्त गुफाओं में देवी-देवताओं के चित्र तथा पशुओं की कलाकृतियाँ प्राप्त हुई हैं।

3. रामायण में रंगोली का वर्णन (Explanation in Ramayana)—रामायण में भी रंगोली का वर्णन प्राप्त होता है। जब रामचंद्र जी व उनकी पत्नी सीता जी वनों में वनवास काट रहे होते हैं उस समय जब लक्ष्मण अपनी भाभी को असुरक्षित और जंगल में झोंपड़ी में अकेला छोड़ने से पहले लक्ष्मण झोंपड़ी के चारों ओर घेरा बनाकर उसे पार न करने तथा उन्हें घर में ही रहने के लिए कहते हैं। परंतु अनजाने में इसे पार करने के कारण उनका हरण हो जाता है। लोक कथाओं के अनुसार लक्ष्मण जो घेरा बनाते हैं वह दैवीय शक्तियों वाली रंगोली का ही एक रूप है। इसके अतिरिक्त जब प्रभु रामचंद्र जी वनवास पूरा कर अपनी नगरी आयोध्या वापिस लौटे तो उनके आगमन की प्रसन्नता में लोगों ने गलियों व अपने घरों के आगे दीपमाला की तथा रंगोली बनाई। इस प्रकार रंगोली का वर्णन रामायण में भी देखा जा सकता है।

4. भागवत में रंगोली का वर्णन (Explanation in Bhagwada)—भागवत में भी रंगोली का वर्णन पाया गया है। गोपिकाएँ श्री कृष्ण जी की प्रबल उपासकाएँ थीं। वे हर पल कृष्ण जी को स्मरण करती थीं। वे स्वयं को श्री कृष्ण के बिना अधूरा समझती थीं। भागवत में वर्णानुसार एक बार श्री कृष्ण वृंदावन को छोड़कर मथुरा गए थे उनके वियोग में गोपिकाओं ने एक साफ सतह पर उनका सटीक रूप बनाना आरंभ कर दिया और इसे रंगों और फूलों से सजाया। वे इस रूप को देखकर ये महसूस करने लगी थी जैसे उनके कृष्ण उनके अंगसंग हैं।

5. वात्स्यायन के कामसूत्र में रंगोली का वर्णन (Explanation in Kamasutra of Vatsayana)—साहित्य जगत के महान् लेखक वात्स्यायन की सुप्रसिद्ध रचना कामसूत्र में भी रंगोली का वर्णन किया गया है। रंगोली को कामसूत्र में वर्णित 64 कलाओं में से एक माना गया है। वात्स्यायन के अनुसार घर के आँगन अथवा घर की चौखट पर बनाए जाने वाले चिन्ह जैसे स्वास्तिक, कमल का फूल, लक्ष्मी जी के पग इत्यादि समृद्धि और मंगलकामना के सूचक माने जाते हैं। वात्स्यायन के अनुसार रंगोली में बनाए जाने वाले सूचक देवी-देवताओं को आकर्षित करने तथा उनको प्रसन्न करने के लिए बनाए जाते हैं। उनके अनुसार चौखट पर रंगोली का निर्माण बुरी आत्माओं व स्वयं को नकारात्मक शक्तियों से दूर रखने के लिए भी किया जाता था।

6. महाभारत में रंगोली का वर्णन (Explained in Mahabharta)—हिंदू धर्म से संबंधित एक अन्य ग्रंथ महाभारत में भी रंगोली का वर्णन पाया जाता है। इस ग्रंथ के अनुसार रंगोली का आरंभ महाभारत के समय में भी पाया जाता था। ऐसा माना जाता है की श्री कृष्ण ने अपनी बहन सुभद्रा को भूमि को साफ करके गाय की आकृति बनाने तथा 33 कमल के फूलों से उनकी पूजा करने तथा 33 बार परिक्रमा करने का निर्देश दिया। उन्होंने उसे यह आश्वासन भी दिलाया कि यदि वह यह अनुष्ठान पूरी श्रद्धा से करेगी तो वह सभी प्रकार के कष्टों से मुक्ति प्राप्त करने में सक्षम हो जाएगी। यह प्रथा जिसे कि गोपद्मव्रत के नाम से जाना जाता है, यह आज भी महाराष्ट्र में प्रचलित है।

7. उर्वशी का जन्म (Birth of Urvashi)—धार्मिक शास्त्र विष्णुधर्मोत्तारा के अनुसार एक बार जब ऋषि नारायण गहन तपस्या में थे तो अप्सराएँ उनका ध्यान भटकाने के उद्देश्य से बार-बार उनके सामने प्रकट होने लगी। वे बार-बार अपनी सुंदरता का प्रदर्शन करने लगीं। क्रोधित होकर ऋषि नारायण ने उन्हें सबक सिखाने के उद्देश्य से अपने समीप के पेड़ों से आम के रस से एक सुंदर महिला का आकार खींचा। अपार सुंदरता की इस मूर्ति को देखकर अप्सराएँ लज्जित हो गईं तथा वहाँ से चली गईं। नारायण ऋषि द्वारा उस मूर्ति रूपेण स्त्री को जीवन प्रदान किया गया। यह स्त्री अप्सरा उर्वशी के नाम से विख्यात हुई।

8. लोकमान्यताओं के अनुसार (According to Popular belief)—रंगोली के इतिहास से संबंधित कई प्रकार की लोकमान्यताओं का भी प्रचलन है जिसका वर्णन निम्न प्रकार है—

(*i*) एक प्रचलित लोक कथा के अनुसार एक बार राजा चित्रलक्षण के दरबार में एक सुप्रसिद्ध पुरोहित के पुत्र का देहांत हो गया। पुरोहित के दु:ख को देखते हुए राजा ने ब्रह्मा जी से याचना की तथा ब्रह्माजी प्रकट हुए तथा उन्होंने दीवार पर उस पुत्र का चित्र बनाने के लिए कहा। राजा द्वारा शीघ्र ही चित्र बनाया गया तथा पुरोहित के पुत्र का पुन: जन्म हो गया।

(*ii*) भारत के दक्षिणी राज्य तामिलनाडु में ऐसा माना जाता है कि इस क्षेत्र की पूजनीय देवी माँ थिरुमाल जी का विवाह मर्गाजी महीने में हुआ था इसलिए इस पूरे माह के दौरान क्षेत्र के हर घर में कन्याएँ सुबह नहा धोकर रंगोली बनाती हैं।

(*iii*) माता सीता के विवाह को भी रंगोली से जोड़ा जाता है। कुछ प्रचलित लोक कथाओं के अनुसार माता सीता के विवाह के समय पूरे नगर एवं विवाह क्षेत्र को खूबसूरत रंगोली से सुशोभित किया गया था।

(*iv*) अन्य लोक कथाओं के अनुसार जब प्रभु रामचंद्र जी 14 वर्ष का वनवास काट कर माता सीता को लेकर आयोध्या लौटे थे तो सभी आयोध्यावासियों ने अपने घर के प्राँगन तथा प्रवेश द्वार को रंगोली से सजाया था।

उद्देश्य (Aims)

रंगोली बनाने के मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार हैं—

1. सकारात्मकता की भावना को जागृत करना (To rise positivity)—रंगोली का मुख्य उद्देश्य सकारात्मकता की भावना को जागृत करना होता है। रंगोली बनाते हुए प्रयोग किए जाने वाले रंग-बिरंगे रंग हमारे मन में सकारात्मकता की भावना को पैदा करते हैं। रंगों से निकलने वाली सकारात्मक ऊर्जा हमारे मन में सकारात्मकता की भावना को जागृत करती है।

2. देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए (To please deities)—प्राचीन समय से लेकर आज तक रंगोली बनाने का एक प्रमुख उद्देश्य देवी-देवताओं को प्रसन्न करना है। लोगों का मानना है कि यदि वे अपने घर के प्रवेश द्वार व चौखट पर रंगोली बनाएँगे तो देवी-देवता उनसे हमेशा प्रसन्न रहेंगे।

3. घर में खुशहाली व समृद्धि लाने के लिए (To bring prosperity in the house)—रंगोली बनाने का एक अन्य उद्देश्य यह था कि लोगों का विश्वास था कि रंगोली बनाने से घर में खुशहाली व समृद्धि का आगमन होता है। घर में सदैव खुशहाली व समृद्धि लाने के लिए लोग प्रवेश द्वारों पर रंगोली चित्रित करते थे।